

## यौन : जीवन का ऊर्जा-आयाम

प्रश्न: धर्मशास्त्रों में स्त्रियों और पुरुषों का अलग रहने में और स्पर्श आदि के बचने में क्या चीज है? इतने इनकार में अनिष्ट वह नहीं होता है?

धर्म के दो रूप हैं। जैसे कि सभी चीजों के होते हैं। एक स्वस्थ और एक अस्वस्थ।

स्वस्थ धर्म तो जीवन को स्वीकार करता है। अस्वस्थ धर्म जीवन को अस्वीकार करता है। जहां भी अस्वीकार है, वहां अस्वास्थ्य है। जितना गहरा अस्वीकार होगा, उतना ही व्यक्ति आत्मघाती है। जितना गहरा स्वीकार होगा, उतना ही व्यक्ति जीवनोन्मुख है।

तो जिन धर्मशास्त्रों में कहा गया है कि स्त्री-पुरुष दूर रहें, स्पर्श भी न करें, मैं उन्हें रुग्ण मानता हूं, बीमारा। स्वस्थ तो मैं उस बात को मानता हूं, जो जीवन में, जीवन की जो सहजता है, जो जीवन का निसर्ग भाव है, उसका जहां अंगीकार हो।

तो ऐसे धर्मशास्त्र भी हैं, जो स्त्री-पुरुष के बीच किसी तरह की कलह, द्वंद्व और संघर्ष नहीं करते। उन्हीं तरह के धर्मशास्त्रों का नाम तंत्र है। और मेरी मान्यता यह है कि जितनी गहरी पहुंच तंत्र की है जीवन के संबंध में, उतनी उन क्षुद्र शास्त्रों की नहीं है, जहां निषेध किया गया है।

मैं तो समर्थन में नहीं हूं। क्योंकि मेरी मान्यता ऐसी है कि जगत और परमात्मा दो नहीं हैं। परमात्मा जगत की ही गहनतम अनुभूति है। और मोक्ष कोई संसार के विपरीत नहीं है; बल्कि संसार के अनुभव में ही जाग जाने का नाम है।

तो मैं पूरे जीवन को स्वीकार करता हूं--उसके समस्त रूपों में। स्त्री-पुरुष इस जीवन के दो अनिवार्य अंग हैं। और एक अर्थ में पुरुष भी अधूरा है, और एक अर्थ में स्त्री भी अधूरी है। उनकी निकटता जितनी गहन हो सके, उतने ही ऐक्य का अनुभव शुरू होता है। तो मेरी दृष्टि में, स्त्री-पुरुष के प्रेम में परमात्मा की पहली झलक उपलब्ध होती है। और जिस व्यक्ति को स्त्री-पुरुष के प्रेम में परमात्मा की पहली झलक उपलब्ध नहीं होती, उसे कोई भी झलक उपलब्ध होनी मुश्किल है।

स्त्री-पुरुष के बीच जो आकर्षण है, वह अगर हम ठीक से समझें, तो जीवन का ही आकर्षण है। और गहरे समझें, तो स्त्री-पुरुष के बीच का जो आकर्षण है, वह परमात्मा की ही लीला का हिस्सा है, उसका ही आकर्षण है। तो मेरी दृष्टि में, उनके बीच के आकर्षण में कोई भी पाप नहीं है।

लेकिन, क्या कारण से स्त्री-पुरुष को कुछ धर्मों ने, कुछ धर्मशास्त्रों ने, कुछ धर्मगुरुओं ने एक शत्रुता का भाव पैदा करने की कोशिश की?

गहरे में एक ही कारण है। मनुष्य के अहंकार पर सबसे बड़ी चोट प्रेम में पड़ती है। जब एक पुरुष एक स्त्री के प्रेम में पड़ जाता है, या एक स्त्री एक पुरुष के प्रेम में पड़ती है, तो उन्हें अपना अहंकार तो छोड़ना ही पड़ता है। प्रेम की पहली चोट अहंकार पर होती है। तो जो अति अहंकारी हैं, वे प्रेम से बचेंगे। बहुत अहंकारी व्यक्ति प्रेम नहीं कर सकता, क्योंकि वह दांव पर लगाना पड़ेगा प्रेम में। प्रेम का मतलब ही यह है कि मैं अपने से ज्यादा

मूल्यवान किसी दूसरे को मान रहा हूं। उसका मतलब ही यह है कि मेरा सुख गौण है अब, किसी दूसरे का सुख ज्यादा महत्वपूर्ण है। और जरूरत पड़े तो मैं अपने को पूरा मिटाने को राजी हूं, ताकि दूसरा बच सके।

और फिर प्रेम की जो प्रक्रिया है, उसका मतलब ही है कि एक-दूसरे में लीन हो जाना। शरीर के तल पर यौन भी इसी लीनता का उपाय है--शरीर के तल पर। प्रेम और गहरे तल पर इसी लीनता का उपाय है। लेकिन दोनों लीनताएं हैं--एक-दूसरे में डूब जाना और एक हो जाना; एक फ्यूजन, फासला मिट जाए और कहीं मेरा मैं खो जाए; अस्तित्व रह जाए, मैं का कोई भाव न रहे।

तो प्रेम से सबसे ज्यादा पीड़ा उनको होती है, जिनको अहंकार की कठिनाई है। तो अहंकारी व्यक्ति प्रेम नहीं कर सकता। अहंकारी व्यक्ति प्रेम के भी विरोध में हो जाएगा और अहंकारी व्यक्ति काम के भी विरोध में हो जाएगा।

ऐसे अहंकारी व्यक्ति अगर धार्मिक हो जाएं, तो उनसे जो धर्म का जन्म होता है, वह रुग्ण धर्म है। और ऐसे अहंकारी व्यक्ति अक्सर धार्मिक हो जाते हैं; क्योंकि उन्हें जीवन में अब कहीं जाने का उपाय नहीं रह जाता। जिसका प्रेम का द्वार बंद है, उसके जीवन का भी द्वार बंद हो गया। और जिसे प्रेम का अनुभव नहीं हो रहा है, उसके जीवन में दुख ही दुख रह गया। अब इस दुख से ऊबने के लिए, उबरने के लिए कोई रास्ता खोजेगा। वह प्रेम में खो नहीं सकता तो अब वह कहीं और खोने का रास्ता खोजेगा। तो वह परमात्मा की कल्पना करेगा, मोक्ष की कल्पना करेगा। लेकिन उसका परमात्मा और मोक्ष अनिवार्य रूप से संसार के विरोध में होगा; क्योंकि वह संसार के विरोध में है। संसार से मतलब: वह प्रेम के विरोध में है, शरीर के विरोध में है। तो उसका जो परमात्मा है--उसकी कल्पना का--वह विपरीत होगा संसार के। एक अर्थ में संसार का दुश्मन होगा।

ऐसा जो आदमी धार्मिक हो जाए तो रुग्ण धर्म पैदा हो जाता है। और ऐसे लोग अक्सर धार्मिक हो जाते हैं। ऐसे लोग शास्त्र भी लिखते हैं, ऐसे लोग अपने विचार का प्रचार भी करते हैं। और दुनिया में बहुत दुखी लोग हैं, वे इस आशा में कि इस तरह के विचारों से आनंद मिलेगा, वे भी इस तरफ झुकते हैं। और दुनिया में सभी के पास थोड़ा-बहुत अहंकार है। तो जिनके भी अहंकार को थोड़ा बढ़ावा पाने की इच्छा हो, वे भी इस ओर झुक जाते हैं।

अहंकारी आदमी हमेशा आक्रामक होता है। तो वह अपने धर्म को लेकर भी आक्रमण करता है दूसरों पर। उनको कनवर्ट करता, उनको समझाता-बुझाता, बदलता है। और चूंकि वह प्रेम, काम, जीवन के सामान्य संबंधों से अपने को दूर रखता है, स्वभावतः ऐसा लगता है कि वह बड़ा त्याग कर रहा है। और जिन चीजों में हमें सुख मिल रहा है, उन सबको छोड़ रहा है, इसलिए हमारे मन में भी आदर पैदा होता है।

आदर तभी पैदा होता है जब हमसे विपरीत कोई कुछ कर रहा हो। जो हम न कर पा रहे हों, वह कोई कर रहा हो, तो आदर पैदा होता है। और वह आक्रामक है, अहंकारी है। वह सब भांति अपने विचार को हमारे ऊपर थोपने की कोशिश करता है। हम उससे राजी न भी हो पाएं, तो कम से कम हममें वह अपराध-भाव, गिल्ट तो पैदा कर ही देता है कि तुम पाप कर रहे हो। तुम जो कर रहे हो वह गलत है और पाप है, इतना भाव तो वह पैदा कर ही देता है।

इस भाव के बड़े मजेदार परिणाम होते हैं। इसका बड़ा परिणाम तो यह होता है कि जो आप कर रहे हैं वह छोड़ तो नहीं पाते, क्योंकि वह स्वाभाविक है, लेकिन अब उसे करते वक्त आपको अपराध की प्रतीति होने लगती है। तो प्रेम जो है, वह पाप हो जाता है। प्रेम भी करते हैं और भीतर कहीं गहरे में यह भी लगता रहता है

कि कुछ गलत कर रहे हैं, कुछ पाप कर रहे हैं। इसका परिणाम यह होता है कि प्रेम से जो भी सुख मिलता था, वह मिलना बंद हो जाता है। प्रेम जारी रहता है और सुख इस अपराध-भाव के कारण मिलना बंद हो जाता है।

जिस चीज में भी अपराध-भाव पैदा हो जाए, उसमें सुख नहीं मिल सकता।

सुख के लिए पहली बात जरूरी है कि मन में अहोभाव हो, अपराध-भाव न हो।

तो पुरुष का मन है कि स्त्री को प्रेम करे, स्त्री का मन है कि पुरुष को प्रेम करे, यह स्वाभाविक आकर्षण है, नैसर्गिक, कुछ इसमें बुरा नहीं है। लेकिन अब वह जो अपराध पैदा कर देंगे त्यागी, वह जहर बन जाएगा। तो स्त्री-पुरुष एक-दूसरे के प्रति आकर्षित भी होंगे और साथ ही विकर्षित भी होंगे। एक दोहरी धारा, द्वंद्व और विपरीत स्थिति बन जाएगी, एक भीतरी कंट्राडिक्शन खड़ा हो जाएगा।

यह सारी मनुष्य-जाति में उन्होंने पैदा कर दिया। इसके उनको फायदे हैं। क्योंकि जब आपको प्रेम से कोई सुख नहीं मिलता, तो उनकी बात बिल्कुल ठीक लगने लगती है कि न तो इसमें कोई सुख है... और सुख नहीं मिलता इसलिए नहीं कि प्रेम में सुख नहीं है, सुख नहीं मिलता इसलिए कि उन्होंने पाप का भाव पैदा कर दिया। अगर कोई बच्चे को समझा दे कि श्वास लेने में पाप है, तो श्वास लेने में दुख मिलने लगेगा। हम जो भी समझा दें, उसमें दुख मिलने लगेगा। दुख जो है, वह कोई भी गलत काम हम कर रहे हैं, उससे मिलने लगेगा। वह काम गलत है या नहीं, यह सवाल नहीं है।

जैसे, जैन घर का बच्चा रात को खाना खाए, तो लगता है कि पाप हो रहा है। जब मैंने पहली दफा रात में खाना खाया तो मुझे वॉमिट हो गई, एकदम उलटी हो गई। क्योंकि चौदह साल तक मैंने कभी रात खाना खाया नहीं था, घर पर कोई कभी खाता नहीं था। और रात खाना पाप था--जाहिर। और जब पहली दफे विद्यार्थियों के साथ पिकनिक पर चला गया और वहां कोई जैन नहीं था, सब हिंदू थे, उन्होंने दिन में कोई फिक्र न की भोजन बनाने की या खाने की। और मेरे अकेले के लिए मुझे अच्छा भी नहीं लगा कि कुछ कहां। दिन भर की थकान, पहाड़ी पर चढ़ना, दिन भर की भूख, और फिर रात उनका खाना बनाना मेरे ही सामने। तो भूख भी, उनके खाने की गंध भी, तो मैं राजी हो गया। फिर मैंने सोचा कि इतने लोग इतने दिन से खाकर अभी तक नरक नहीं गए, एक दिन खा लेने से मैं नरक चला जाऊंगा? नरक तो नहीं गया, लेकिन रात मेरी तकलीफ में पड़ गई, मैं नरक में ही रहा; क्योंकि मुझे उलटी हो गई खाने के बाद। चौदह साल तक जिस बात को पाप समझा हो, उसको एकदम से भीतर ले जाना बहुत मुश्किल है। उस दिन जब मुझे उलटी हो गई तो मैंने यही सोचा कि बात पाप ही है, नहीं तो उलटी कैसे हो जाती!

तो विसियस सर्किल हैं, विचार के भी दुष्टचक्र हैं। जिस चीज को हम पाप मान लेते हैं, उसमें सुख नहीं मिलता, दुख मिलने लगता है। और जब दुख मिलने लगता है, तो उसे और भी पाप मान लेने का गहरा भाव हो जाता है। जितना गहरा पाप मानते हैं, उतना ज्यादा दुख मिलने लगता है।

इस भांति पांच हजार साल से त्यागवादी आदमी की गर्दन पकड़े हुए हैं। और वे बीमार लोग हैं, रुग्ण हैं। जीवन को जो भोग नहीं सकते--क्योंकि जीवन के भोगने के लिए जो अनिवार्य शर्त है, उसको वे पूरी नहीं कर सकते, उनका अहंकार बाधा बनता है--तब फिर वे कहना शुरू कर देते हैं कि सब अंगूर खट्टे हैं। और वह इतना प्रचार किया हुआ है अंगूर खट्टे होने का कि अंगूर खट्टे हैं या नहीं, जब आप उनको मुंह में डालते हैं तो आपके दांत कहते हैं कि खट्टे हैं। प्रचार इतना बड़ा है।

इन सारे लोगों ने स्त्री-पुरुष के बीच बहुत तरह की बाधाएं खड़ी की हैं। और चूंकि इनमें अधिक लोग पुरुष थे, इसलिए स्वभावतः स्त्री को उन्होंने बुरी तरह निंदित किया। ये सब शास्त्र रचने वाले चूंकि अधिकतर

पुरुष थे, इसलिए स्त्री को उन्होंने बिल्कुल नरक का द्वार बना दिया। तो नरक के द्वार को छूने में खतरा तो है ही फिर। नरक के द्वार के पास होने में खतरा है।

और जितना इन लोगों ने यह भाव पैदा किया कि स्त्री नरक का द्वार है, स्त्री-पुरुष के संबंध पाप हैं, अपराध हैं--ये भी सामान्य मनुष्य थे, इनके भीतर भी स्त्री के प्रति वही आकर्षण था जो किसी और के मन में है। और जब इन्होंने इतना विरोध किया तो यह आकर्षण और बढ़ गया। निषेध से आकर्षण बढ़ता है। जिस चीज का इनकार किया जाए, उसमें एक तरह का रस पैदा होना शुरू हो जाता है। तो ये दिन-रात इनकार करते रहे तो इनका रस भी बढ़ गया। और जब इनका रस बढ़ गया, तो अगर इस तरह के लोग ध्यान करने बैठें, प्रार्थना करने बैठें, तो स्त्री ही उनको दिखाई पड़ने वाली है। वे भगवान को देखना चाहते हैं, लेकिन दिखाई स्त्री पड़ती है! तब स्वभावतः उनको और भी पक्का होता चला गया कि स्त्री ही नरक का द्वार है। कहां हम भगवान को जब भी पाने जाना चाहते हैं, तभी स्त्री बीच में आ जाती है!

सारे ऋषि-मुनियों को स्त्रियां सताती हैं। इसमें स्त्रियों का कोई कसूर नहीं है, इसमें ऋषि-मुनियों के मन की भाव-दशा है। ये ऋषि-मुनि स्त्री के खिलाफ लड़ रहे हैं। कोई ऊपर इंद्र बैठा हुआ नहीं है कि अप्सराएं भेज दे। मगर इन सबको अप्सराएं घेर लेती हैं--नग्न स्त्रियां, सुंदर स्त्रियां--ये इनके मन के रूप हैं! जो इन्होंने दबाया है और जिसको निषेध किया है, वह इतना प्रगाढ़ हो गया है, वह इतना प्रगाढ़ हो गया है कि अब वह बिल्कुल इनको वास्तविक मालूम पड़ता है।

तो इनके कहने में भी गलती नहीं है कि इन्होंने जो अप्सराएं देखीं, बिल्कुल वास्तविक हैं। यह अत्यंत रुग्ण चित्त की दशा है, विक्षिप्त चित्त की दशा है--जब कि कोई वासना इतनी प्रगाढ़ हो जाती है कि उस वासना से जो स्वप्न खड़ा होता है वह वास्तविक मालूम होता है। यह पागल मन की हालत है। और इन सबको स्त्रियां ही सताती हैं, क्योंकि इनका पूरे जीवन का सारा संघर्ष स्त्री से है।

जिससे संघर्ष है, वह सताएगा। जिस दिन आपने उपवास किया है, उस दिन भोजन के स्वप्न आ जाएंगे। और अगर दो-चार महीने का आपको लंबा उपवास करना पड़े, तो आप डिल्यूजन की हालत में हो जाएंगे--मस्तिष्क फिर जो भी देखेगा, भोजन ही दिखाई पड़ेगा; कुछ भी सुनेगा, भोजन ही सुनाई पड़ेगा; कोई भी गंध आएगी, वह भोजन की ही गंध होगी। इससे कहीं कोई संबंध बाहर का नहीं है। इसके भीतर जो अभाव पैदा हो गया है, वह प्रक्षेपण कर रहा है।

तो जब इन ऋषि-मुनियों को ऐसा लगा कि स्त्री सब तरह डिगाती है और उनके ध्यान की अवस्था नष्ट हो जाती है, और वे बड़ी ऊंचाई पर चढ़ रहे थे और नीचे गिर जाते हैं--कोई न गिरा रहा है, न कहीं वे चढ़ रहे थे, सब उनका मन का खेल है; वे जिससे लड़ रहे थे, जिससे भाग रहे थे, उसी से खिंच कर नीचे गिर जाते हैं--तो फिर स्वभावतः उन्होंने कहा कि स्त्री को देखना भी नहीं, छूना भी नहीं। स्त्री बैठी हो किसी जगह, तो उस जगह पर एकदम मत बैठ जाना; कुछ काल व्यतीत हो जाने देना, ताकि उस स्त्री की ध्वनि-तरंगें उस स्थान से अलग हो जाएं।

अब यह बिल्कुल रुग्ण-चित्त लोगों की दशा है। इतने भयभीत लोग! और जो स्त्री से इतने भयभीत हों, वे कुछ और पा सकेंगे, इसकी संभावना नहीं है। इस तरह के लोगों ने जो बातें लिखी हैं, मैं मानता हूं कि आज नहीं कल हम उनको विक्षिप्त, मनोविकारग्रस्त शास्त्रों में गिनेंगे।

मेरा कोई समर्थन इनको नहीं है। मेरा तो मानना ऐसा है कि जीवन में मुक्ति का एक ही उपाय है कि जीवन का जितना गहन अनुभव हो सके! और जिस चीज के हम जितने गहन अनुभव में उतर जाते हैं, उतना ही उससे हमारा छुटकारा हो जाता है।

अगर निषेध से रस पैदा होता है, तो अनुभव से वैराग्य पैदा होता है। मेरी जो दृष्टि है कि जिस चीज को हम जान लेते हैं, जानते ही हमारा उससे जो विक्षिप्त आकर्षण था, वह शांत होने लगता है।

और स्वभावतः काम का आकर्षण सर्वाधिक है। होगा! क्योंकि हम उत्पन्न काम से होते हैं। और हमारे शरीर का एक-एक कण जीवाणु काम-कण है। माता-पिता के जिस कामाणु से निर्माण होता है, फिर उसी का विस्तार हमारा पूरा शरीर है। तो हमारा रोआं-रोआं काम से निर्मित है। पूरी सृष्टि काम-सृष्टि है। इसमें होने का मतलब ही है कामवासना के भीतर होना।

जैसे हम श्वास ले रहे हैं हवा में, उससे भी गहरा हमारा अस्तित्व कामवासना में है। क्योंकि श्वास लेना तो बहुत बाद में शुरू होता है। बच्चा जब मां के पेट से पैदा होगा और जब रोएगा, तब पहली श्वास लेगा। इसके पहले भी नौ महीने वह जिंदा रह चुका है। और वह नौ महीने जो जिंदा रह चुका है, वह तो उसकी काम-ऊर्जा का ही सारा फैलाव है।

तो वह जो काम-ऊर्जा से हमारा सारा शरीर निर्मित है, कण-कण निर्मित है, श्वास से भी गहरा हमारा उसमें अस्तित्व छिपा हुआ है, उससे भाग कर कोई बच नहीं सकता। क्योंकि भागोगे कहां? वह तुम्हारे भीतर है, तुम ही हो। तो मैं कहता हूं, उससे भागने की कोई जरूरत नहीं। और भागने वाला उपद्रव में पड़ जाता है। तो जीवन में जो है, उसका सहज अनुभव, उसका स्वीकार।

और जितना गहरा अनुभव होता है, उतने हम जाग सकते हैं।

इसलिए मैं तंत्र के पक्ष में हूं, त्याग के पक्ष में नहीं हूं। और मेरा मानना है, जब तक त्यागवादी धर्म दुनिया से समाप्त नहीं होते, तब तक दुनिया सुखी नहीं हो सकती, शांत भी नहीं हो सकती। सारी रोग की जड़ इनमें छिपी है।

तंत्र की दृष्टि बिल्कुल उलटी है। तंत्र कहता है कि अगर स्त्री-पुरुष के बीच आकर्षण है, तो इस आकर्षण को दिव्य बनाओ। इससे भागो मत, इसको पवित्र करो। अगर कामवासना इतनी गहरी है तो इससे तुम भाग सकोगे भी नहीं। तो इस गहरी कामवासना को ही क्यों न परमात्मा से जुड़ने का मार्ग बनाओ। और अगर सृष्टि काम से हो रही है, तो परमात्मा को हम कामवासना से मुक्त नहीं कर सकते, नहीं तो कुछ होने का उपाय नहीं रह जाता। अगर कहीं भी कोई शक्ति है इस जगत में, तो उसका हमें किसी न किसी रूप से कामवासना से संबंध जोड़ना ही पड़ेगा। नहीं तो इस सृष्टि के होने का कहीं कोई आधार नहीं रह जाता। इस सृष्टि में जो कुछ हो रहा है, यह किसी न किसी रूप में परमात्मा से जुड़ा है।

और हम आंखें खोल कर चारों तरफ देखें तो सारा काम का फैलाव है। आदमी में तो हम बेचैन हो जाते हैं, वे ऋषि-मुनि भी आदमी में बेचैन हो जाते हैं, लेकिन और तरफ उनको ख्याल में नहीं आता। सुबह जब पक्षी गीत गा रहे हैं तो उनको लगता है कि बड़ी दिव्य बात हो रही है। लेकिन वह पक्षी जो पुकार लगा रहा है वह सब कामवासना की है। और जब फूल खिलते हैं ऋषि की वाटिका में तो वह सोचता है, बड़ी अदभुत बात है। और फूलों को जाकर भगवान को चढ़ा रहा है। लेकिन सब फूल कामवासना के रूप हैं। वे वीर्याणु हैं उनमें। उनमें छिपा बीज है जन्म का। और फूलों पर तितलियां घूम कर उनके वीर्याणु को लेकर दूसरे फूलों से जाकर मिला रही हैं। तो फूल देख कर तो ऋषि खुश होता है, क्योंकि उसको ख्याल में नहीं है कि फूल जो है वह कामवासना

का रूप है। पक्षी का गीत सुन कर खुश होता है। मोर नाचता है तो खुश होता है। कोयल पुकारती है तो खुश होता है। लेकिन उसे पता नहीं। सिर्फ आदमी में ही क्यों परेशान है? आदमी से क्या परेशानी है? वही काम!

लेकिन आदमी के काम से वह परिचित है, वह उसकी खुद की पीड़ा है। बाकी पूरी प्रकृति काम का फैलाव है। यहां जो भी दिखाई पड़ रहा है, उस सबके भीतर काम छिपा हुआ है। सारा फैलाव, सारा खेल उसका है। तो जो काम इतने गहरे में है, वह परमात्मा से जुड़ा होगा।

तंत्र कहता है, सबसे ज्यादा गहरी चीज कामवासना है, क्योंकि उससे ही जन्म होता है, उससे ही जीवन फैलता है। तो इस गहरे तंतु का हम उपयोग कर लें। इस तंतु से लड़ें न, बल्कि इस तंतु को धारा बना लें, जिसमें हम बह जाएं।

और कामवासना को अगर कोई धारा बना ले, ध्यान बना ले, समाधि बना ले, तो दोहरे परिणाम होते हैं। वह जो ऋषि निरंतर चाहता है--त्यागवादी--कि छूटकारा हो जाए, वह भी हो जाता है। और दूसरा परिणाम यह होता है कि यह व्यक्ति कामवासना से भी छूट जाता है और कामवासना के कारण अहंकार से भी छूट जाता है।

तंत्र की साधना ही स्वस्थ साधना है।

तो मैं तो विरोध में नहीं हूं। न तो मैं विरोध में हूं कि स्पर्श से बचें वे। न बच सकते हैं। ऐसा ऊपर से बचेंगे तो भीतर अप्सराएं सताएंगी। उससे इस पृथ्वी की स्त्रियों में कुछ ज्यादा उपद्रव नहीं है। बचने की बात ही, मैं मानता हूं, गलत है। भागना क्यों? डरना क्यों? जीवन जैसा है, उसके तथ्य में जागरूक होना। अगर मेरे मन में किसी चीज के प्रति आकर्षण है, तो मैं इस आकर्षण को समझने की कोशिश करूं--क्या है यह आकर्षण? क्यों है यह आकर्षण? और इस आकर्षण को मैं कैसे सृजनात्मक करूं कि इससे मेरा जीवन खिले और विकसित हो। यह मेरा विध्वंस न बन जाए। और इस आकर्षण का मैं उपयोग कैसे करूं, यह सवाल है।

तो इस आकर्षण का गहरा उपयोग ध्यान के लिए हो सकता है। और स्त्री-पुरुषों की सन्निधि बड़ी मुक्तिदायी हो सकती है। अगर कभी ऐसा हुआ कि मनुष्य और ज्यादा समझदार, और ज्यादा विचारपूर्ण हुआ, तो हम स्त्री-पुरुष के बीच की सारी बाधाएं तोड़ देंगे। स्त्री-पुरुष के बीच की बाधाएं तोड़ते ही हमारी नब्बे परसेंट बीमारियां विलीन हो जाएंगी। क्योंकि उन बाधाओं के कारण सारे रोग खड़े हो रहे हैं। हमको दिखाई नहीं पड़ता। और चक्र ऐसा है कि जब रोग खड़े होते हैं तो हम सोचते हैं, और बाधाएं खड़ी करो, ताकि रोग खड़े न हों!

अभी मैं एक गांव में था। और कुछ बड़े विचारक और संत-साधु मिल कर अश्लील पोस्टर विरोधी एक सम्मेलन कर रहे थे। तो उनका ख्याल है कि अश्लील पोस्टर लगता है दीवाल पर, इसलिए लोग कामवासना से परेशान रहते हैं। जब कि हालत दूसरी है, लोग कामवासना से परेशान हैं, इसलिए पोस्टर में मजा है। यह पोस्टर कौन देखेगा? पोस्टर को देखने कौन जा रहा है?

पोस्टर को देखने वही जा रहा है, जो स्त्री-पुरुष के शरीर को देख ही नहीं सका। जो शरीर के सौंदर्य को नहीं देख सका, जो शरीर की सहजता को अनुभव नहीं कर सका, वह पोस्टर देख रहा है। पोस्टर इन्हीं गुरुओं की कृपा से लग रहे हैं, क्योंकि ये इधर स्त्री-पुरुष को मिलने-जुलने नहीं देते, पास नहीं होने देते, तो इसका परवर्टंड, विकृत रूप है कि कोई गंदी किताब पढ़ रहा है, कोई गंदी तस्वीर देख रहा है, कोई फिल्म बना रहा है। क्योंकि आखिर यह फिल्म कोई आसमान से नहीं टपकती, लोगों की जरूरत है।

इसलिए सवाल यह नहीं है कि गंदी फिल्म क्यों है, सवाल यह है कि लोगों में जरूरत क्यों है? यह तस्वीर जो पोस्टर लगती है, कोई ऐसे ही मुफ्त पैसा खराब करके नहीं लगाता, इसका कोई उपयोग है। इसे कहीं कोई देखने को तैयार है, मांग है इसकी। वह मांग कैसे पैदा हुई है?

वह मांग हमने पैदा की है। स्त्री-पुरुष को दूर कर-कर के वह मांग पैदा कर दी। अब वह मांग को पूरा करने जब कोई जाता है तो हमको लगता है कि गड़बड़ हो रही है। तो उसको और बाधाएं डालो। उसको जितनी वे बाधाएं डालेंगे, वह नये रास्ते खोजता है मांग के। क्योंकि मांग तो अपनी पूर्ति मांगती है।

तो मैंने उनको कहा कि अगर सच में ही चाहते हो कि ये पोस्टर विलीन हो जाएं, तो स्त्री-पुरुषों के बीच की बाधा कम करो। क्योंकि मैं नहीं देखता--आदिवासी समाज है, जहां स्त्री-पुरुष सहज हैं, करीब-करीब नग्न हैं--वहां कोई पोस्टर लगा है? या कोई पोस्टर में रस ले?

जब पहली दफे ईसाई मिशनरी ऐसे कबीलों में पहुंचे जहां लोग नग्न थे, तो उनको यह भरोसा ही नहीं आया कि कोई नग्न स्त्री में भी रस ले सकता है। क्योंकि रस लेने का कोई कारण नहीं है। जब तक हम वस्त्रों में ढांके हैं और दीवालें और बाधाएं खड़ी किए हैं, तब रस पैदा होगा। रस पैदा होगा, तो हम सोचते हैं कि--और डर पैदा हो रहा है--तो इसको रोको। मनुष्य की अधिक उलझनें इसी भांति की हैं--कि जो सोचता है कि सीढ़ियां हैं सुलझाव की, वही उपद्रव हैं, वही बाधाएं हैं।

तो मैं तो मानता हूं कि बच्चे बड़े हों, साथ बड़े हों; लड़के और लड़कियों के बीच कोई फासला न हो; साथ खेलें, दौड़ें, बड़े हों; साथ स्नान करें, तैरें; ताकि स्त्री-पुरुष के शरीर की नैसर्गिक प्रतीति हो। और वह प्रतीति कभी भी रुग्ण न बन जाए। और उसके लिए कोई बीमार रास्ते न खोजने पड़ें।

और यह बिल्कुल उचित ही है। यह उचित ही है कि पुरुषों की स्त्री के शरीर में उत्सुकता हो, स्त्री की पुरुषों के शरीर में उत्सुकता हो। यह बिल्कुल स्वाभाविक है। और इसमें कुछ भी कुरूप नहीं है और कुछ भी अशोभन नहीं है।

अशोभन तो तब होता है... जो हमने किया है उससे अशोभन हो गई बात। अब जिस स्त्री से मेरा प्रेम हो उसके शरीर में मेरा रस होना स्वाभाविक है, नहीं तो प्रेम ही नहीं होगा। लेकिन एक अनजान स्त्री को रास्ते पर मैं धक्का मार दूं भीड़ में, यह अशोभन है। लेकिन इसके पीछे ऋषि-मुनियों का हाथ है। जिस स्त्री से मेरा प्रेम है, उसे मैं अपने करीब, निकट ले लूं, उसका आलिंगन करूं, यह समझ में आने वाली बात है, इसमें कुछ बुरा नहीं है। लेकिन जिस स्त्री को मैं जानता ही नहीं, जिससे मेरा कोई लेना-देना नहीं है, रास्ते पर मौका भीड़ में मिल जाए तो मैं उसको धक्का मार दूं। उस धक्के में कुछ बीमार बात है। वह धक्का क्यों पैदा हो रहा है?

वह धक्का किसी जरूरत की कमी है। जिससे प्रेम हो सकता है, उसको मैं कभी पास नहीं ले पाता! वह रुग्ण हो गई मेरी वृत्ति, अब मैं धक्का मारने में भी रस ले रहा हूं। तो भीड़ में एक धक्का ही मार कर चला गया तो भी समझो कि कुछ सुख पाया। और सुख इसमें मिल नहीं सकता; ग्लानि मिलेगी मन को, निंदा मिलेगी, अपराध का भाव पैदा होगा; तो मैं समझूंगा कि मैं पाप कर रहा हूं। और जितना मैं समझूंगा कि मैं पाप कर रहा हूं, उतना स्त्री और मेरे बीच का फासला बढ़ता जाएगा। और जितना फासला बढ़ेगा, इसको मिटाने की मैं बेहूदी कोशिशें करूंगा। और यह चलता रहेगा।

तो मैं तो स्त्री-पुरुष को निकट लाना चाहता हूं। इतने निकट कि उनको यह प्रतीति नहीं रह जानी चाहिए कि कौन स्त्री है, कौन पुरुष है। स्त्री-पुरुष होना चौबीस घंटे का बोध नहीं होना चाहिए। वह बीमारी है, अगर इतना बोध बना रहता है तो। स्त्री-पुरुष होना चौबीस घंटे का बोध नहीं होना चाहिए। वह मिटेगा तभी जब

हम बीच के फासले मिटाएंगे। और इसके गहरे परिणाम हों कि समाज की अक्षीलता, गंदा साहित्य, गंदी फिल्में, बेहूदी वृत्तियां, वे अपने आप गिर जाएं। और एक ज्यादा स्वस्थ मनुष्य का जन्म हो। और यह जो स्वस्थ मनुष्य है, इसकी मैं आशा कर सकता हूं कि यह धार्मिक हो सके। क्योंकि जो स्वस्थ ही नहीं हो पाया अभी, उसके धार्मिक होने की कोई आशा मैं नहीं मानता।

तो एक तो धर्म है जो अधर्म से भी बुरा है, अस्वस्थ धर्म। उससे तो अधर्म ठीक। और एक धर्म है जो अधर्म से श्रेष्ठ है, और उसे मैं कहता हूं स्वस्थ धर्म। जीवन की समझ, प्रतीति, अनुभव, होश--इससे पैदा हुआ धर्म। स्त्री-पुरुष जितने निकट होंगे, उतना ही यह जो उपद्रव है, शांत हो जाए। और यह उपद्रव शांत हो जाए तो असली खोज शुरू हो। क्योंकि आदमी बिना आकर्षण के नहीं जी सकता। और अगर स्त्री-पुरुष का आकर्षण शांत हो जाता है तो वह और गहरे आकर्षण की खोज में लग जाता है। बिना आकर्षण के जीना मुश्किल है। वही प्रयोजन है। और जो स्त्री-पुरुष में ही लड़ता रहता है, उसका आकर्षण तो कायम रहता है, दूसरे आकर्षण का कोई उपाय नहीं है।

परमात्मा मेरे लिए प्रकृति में ही गहरे अनुभव का नाम है। और जिस दिन वह अनुभव होने लगता है, उस दिन ये सारे, जिनसे हम बचना चाहते थे, इनसे हम बच जाते हैं, पर बिना कोई चेष्टा किए। एक तो कच्चा फल है, जिसको कोई झटका देकर तोड़ ले। और एक पका हुआ फल है जो वृक्ष से गिर जाता है। न वृक्ष को खबर होती है कि वह कब गिर गया; न फल को खबर होती है कि कब गिर गया। न फल को लगता है कि कोई बड़ा भारी प्रयास करना पड़ा। न, कहीं कुछ होता नहीं, सब चुपचाप हो जाता है।

तो जीवन के अनुभव से एक वैराग्य का जन्म होता है, जिसको मैं पका हुआ फल कहता हूं। और जीवन से लड़ने से एक वैराग्य का जन्म होता है, जिसको मैं कच्चा फल कहता हूं। सब तरफ घाव छूट जाते हैं। और उन घावों का भरना मुश्किल है।

तो मैं तो ऐसे किसी शास्त्रों के पक्ष में नहीं हूं। मेरा तो मानना यह है कि जो भी प्रकृति से उपलब्ध है, उसका समग्र, सर्वांगीण स्वीकार। और उसी स्वीकार से रूपांतरण है। और यही रूपांतरण गहरा हो सकता है। संघर्ष में मेरा भरोसा नहीं है।

और इसी बात को मैं आस्तिकता कहता हूं। सब त्यागियों को मैं नास्तिक कहता हूं। क्योंकि परमात्मा की सृष्टि उन्हें स्वीकार नहीं। और जिनको परमात्मा की सृष्टि स्वीकार नहीं, वे परमात्मा भी उन्हें मिल जाएगा तो स्वीकार करेंगे, मैं नहीं मानता। अस्वीकृति की उनकी आदत इतनी गहरी है कि जब वे परमात्मा को भी देखेंगे तो हजार भूलें निकाल लेंगे कि इसमें यह पाप है। और यह...।

शॉपनहार ने कहीं कहा है कि हे परमात्मा, तू तो मुझे स्वीकार है, तेरी सृष्टि स्वीकार नहीं है।

लेकिन अगर परमात्मा स्वीकार है, तो उसकी सृष्टि अनिवार्यरूपेण स्वीकृत हो जाती है। और अगर उसकी सृष्टि स्वीकार नहीं है, तो बहुत गहरे में हम उसे भी स्वीकार नहीं कर सकते। कैसे स्वीकार करेंगे? फिर या तो हम परमात्मा से ज्यादा समझदार हो गए, उससे ऊपर अपने को रख लिया कि हम उसमें भी चुनाव करते हैं।

मेरा कोई चुनाव नहीं। मैं तो मानता हूं, जो प्रकट है, वह अप्रकट का ही हिस्सा है। जो दिखाई पड़ रहा है, उसके पीछे ही अदृश्य छिपा हुआ है। थोड़ी पर्त में भीतर प्रवेश करने की जरूरत है।

और प्रेम जितना गहरा जाता है, इस जगत में कोई और चीज इतनी गहरी नहीं जाती। मैं छुरा मार सकता हूं आपकी छाती में, वह उतना गहरा नहीं जाएगा जितना मेरा प्रेम आपके भीतर गहरा जाएगा। तो प्रेम से गहरा तो कुछ भी नहीं जाता। इसको ही जो छोड़ देता है, वह उथला सतह पर रह जाता है।



तो मेरे मन में तो ऐसे शास्त्र अनिष्ट हैं। और जितने शीघ्र उनसे छुटकारा हो उतना अच्छा। और ऐसे ऋषि-मुनियों की चिकित्सा होनी चाहिए, मानसिक रोग है उन्हें।

प्रश्न: जो अभी सब साधु-संत आते हैं, वे चमत्कार बताते हैं, उसको सब लोग बहुत मानते हैं। तो चमत्कार के विषय में आपका क्या मत है?

आदमी बहुत कमजोर है, और बहुत तरह की तकलीफों में है। उसकी तकलीफें बिल्कुल सांसारिक हैं। और सामान्य आदमी ही नहीं, सुशिक्षित, जिनको हम विशेष कहें, वे भी।

अभी एक चार-छह दिन पहले कलकत्ता से एक डाक्टर का पत्र मुझे आया। वह डाक्टर है, तबादला करवाना है कलकत्ता से बनारस। पत्नी-बच्चे बनारस में हैं। तो मुझे लिखता है कि मैं सब तरह के पूजा-पाठ करवा चुका, साधु-संतों के सब तरह के दर्शन कर चुका, सैकड़ों रुपये भी खर्च कर चुका इस पर, लेकिन अभी तक मेरा तबादला नहीं हो पाया। तब आखिरी आपकी शरण आता हूं कि तबादला करवा दें, नहीं तो मेरा भगवान से भरोसा ही उठ जाएगा।

इधर मैं देखता हूं, सौ में निन्यानबे आदमियों की तकलीफें ऐसी हैं। और जितना गरीब मुल्क होगा, उतनी ये तकलीफें ज्यादा होंगी। किसी को नौकरी नहीं, किसी को बच्चा नहीं, किसी को बीमारी है, किसी को कोई तकलीफ है—हजार तरह की तकलीफें हैं। यह जो तकलीफों से भरा हुआ आदमी है, यह चमत्कार की तलाश करता है। अगर कोई चमत्कार कर रहा है तो इसे एक आशा बंधती है कि शायद इसकी तकलीफ भी दूर हो सकती है। और तो सब आशा छूट गई है, और यह सब उपाय कर चुका, कुछ होता दिखाई इसे पड़ता नहीं। लेकिन अगर यह देख ले कि कोई आदमी हवा में से भभूत दे रहा है, तो फिर इसे भरोसा आता है कि अभी भी कुछ आशा है, मुझे भी लड़का मिल सकता है। जब हवा से भभूत आ सकती है, तो साधु के चमत्कार से बच्चा भी आ सकता है। और अगर हाथ से सोना आ जाता है और घड़ियां आ जाती हैं, तो फिर क्या दिक्कत कि मेरा तबादला न हो जाए और मुझे नौकरी न मिल जाए।

गरीब समाज है, दुखी-पीड़ित समाज है। और जब तक लोग दुखी हैं, तब तक कोई न कोई चमत्कार से शोषण करेगा। सिर्फ ठीक संपन्न समाज हो तो चमत्कार का असर कम हो जाएगा। जितनी तकलीफ होगी उतना चमत्कार का परिणाम होगा।

फिर चमत्कार क्या हैं? एक तरफ तो ये दुखी-पीड़ित लोग हैं जिनका शोषण किया जा सकता है आसानी से। ये हाथ फैलाए खड़े हैं कि इनका शोषण करो। और इनका शोषण एक ही तरह से किया जा सकता है कि इनकी वासनाओं की तृप्ति की कोई आशा बंधे। तो वह आशा कैसे बंधे?

अगर कोई बुद्ध-महावीर हो, तो वह तो आशा बंधाता नहीं। वह तो उलटे इस आदमी को कहता है कि तुम्हारे दुखों का कारण तुम्हीं हो। तो तुम दुख के बाहर कैसे जाओगे, उसका मैं रास्ता बता सकता हूं। लेकिन जिन कारणों से तुम दुखी हो, उनको पूर्ति करने का मेरे पास कोई उपाय नहीं है।

लेकिन बुद्ध-महावीर के प्रति ये आदमी आकर्षित नहीं होंगे। इनकी वासना ही वह नहीं है अभी। एक आदमी ताबीज निकाल देगा, उसके प्रति आकर्षित होंगे, क्योंकि इनकी वासना के लिए रास्ता मिलता है। और ताबीज निकालना इतना आसान काम है कि सड़क पर मदारी कर रहा है उसको। जिसको हम दो पैसे देने को

भी राजी नहीं हैं। और वही मदारी कल साधु बन कर खड़ा हो जाए तो फिर हम उसके चरणों में सिर रखने को और सब कुछ रखने को राजी हैं।

तो गरीबी है, दुख है और मूढ़ता है। और मूढ़ता यह है कि साधु कर रहा है तो चमत्कार है और गैर-साधु कर रहा है तो मदारी है। और जो वे कर रहे हैं वह बिल्कुल एक चीज है। उसमें जरा भी फर्क नहीं है। बल्कि मदारी ईमानदार है और यह साधु बेईमान है। क्योंकि मदारी बेचारा कह रहा है कि यह खेल है। यही उसकी भूल है, मूढ़ों के बीच इतना साफ होना ठीक नहीं। इतना सच्चा होना, यही उसकी गलती है--कि वह कह रहा है, यह खेल है, इसमें हाथ की तरकीब है; कि आप भी चाहें तो सीख सकते हैं और कर सकते हैं। बात खतम हो गई, तो फिर हमें कोई रस नहीं है उसमें। हमें खुद में तो कोई रस है ही नहीं। जो हम ही कर सकते हैं, उसमें कोई बात नहीं रह गई। यह मदारी बताने को तैयार है कि कैसे हो रहा है। यह मदारी परीक्षा ली जाए इसके लिए तैयार है। वह आपका साधु न तो परीक्षा के लिए तैयार है, न किसी तरह के वैज्ञानिक शोध के लिए राजी है।

लेकिन फिर कारण क्या है, हम उसको इतना मूल्य देते हैं और मदारी को नहीं देते?

क्योंकि मदारी से हमारी वासना की कोई पूर्ति की आशा नहीं बंधती। ठीक है, हाथ का खेल है, बात खतम हो गई। अगर मैं हाथ के खेल से ही ताबीज निकाल रहा हूं तो बात खतम हो गई। ठीक है, अब मुझसे क्या आपको मिलेगा और। कोई हाथ के खेल से बच्चा तो पैदा नहीं हो सकता। न नौकरी मिल सकती है, न धन आ सकता है, न मुकदमा जीता जा सकता--कुछ नहीं हो सकता--न आपकी बीमारी दूर हो सकती है। हाथ का खेल तो हाथ का खेल है। ठीक है, मनोरंजन है, बात खतम हो गई।

जब मैं यह दावा करता हूं कि हाथ का खेल नहीं है, यह चमत्कार है, दिव्य शक्ति है, तब आपकी आशा बंधती है। फिर आपकी आशा का शोषण होता है।

तो मैं मानता हूं, जो भी साधु चमत्कार करते हैं, उनसे ज्यादा असाधु व्यक्ति खोजने कठिन हैं। क्योंकि असाधुता और क्या होगी इसके कि लोगों का शोषण हो! और उनकी मूढ़ता का लाभ! और धोखा! एक भी चमत्कार ऐसा नहीं है जो मदारी नहीं करते। पर अंधेपन की सीमाएं नहीं हैं। सच तो यह है कि मदारी जो करते हैं वह आपके कोई साधु नहीं कर सकते। और जो आपके साधु करते हैं वह दो कौड़ी का मदारी कोई भी करता है। और जो मदारी करते हैं वह आपका कोई साधु नहीं कर सकता। फिर भी... तो इसके पीछे कोई कारण है।

यह मैं समझा भी दू तो मैं यह मानता नहीं कि मेरे समझाने से कोई चमत्कार में आस्था रखने वाले में कोई फर्क पड़ने वाला है। कोई फर्क नहीं। क्योंकि यह समझाने का सवाल नहीं है, उसकी जो वासना है वह तकलीफ दे रही है। उसके भीतर जो वासना है उसका प्रश्न है कि वह कैसे हल हो?

अब यह जो आदमी है, डाक्टर, जिसने मुझे लिखा, इसको मैं कितना ही समझाऊं, इससे कोई फर्क नहीं पड़ने वाला। क्योंकि समझाने से तबादला तो होगा नहीं। समझाने का एक ही परिणाम होगा कि यह मुझे हाथ जोड़ कर किसी और की तलाश करे। और कोई उपाय नहीं है। क्योंकि यह आदमी--इस आदमी को कुछ मालूम नहीं है, बात खतम हो गई। इतना ही इसका परिणाम होगा, और कोई परिणाम होने वाला नहीं। यह किसी और की तलाश करेगा। जो चमत्कार के तलाशी हैं... और हमारे मुल्क में ज्यादा होंगे, क्योंकि बहुत दुखी मुल्क है, बहुत पीड़ित मुल्क है, अति कष्ट में है। इतने कष्ट में यह शोषण आसान है।

मगर मेरा मानना ऐसा है कि धर्म से चमत्कार का कोई लेना-देना नहीं है। क्योंकि धर्म का वस्तुतः आपकी वासना से कोई लेना-देना नहीं है। धर्म तो इस बात की खोज है कि वह घड़ी कैसे आए जब सब वासनाएं शांत हो जाएं। कैसे वह क्षण आए जब मेरे भीतर कोई चाह न रह जाए। क्योंकि तभी मैं शांत हो पाऊंगा। जब

तक चाह है तब तक अशांति रहेगी। चाह ही अशांति है। तो धर्म की तो पूरी चेष्टा यह है कि कैसे आपके भीतर वह भावदशा बन जाए, जहां कोई चाह नहीं है, कोई मांग नहीं है। उस घड़ी ही अनुभव होगा जीवन की परम धन्यता का।

तो चमत्कार से क्या लेना-देना है? धर्म का कोई लेना-देना चमत्कार से नहीं है। और सब चमत्कार मदारी के लिए हैं। जो नासमझ मदारी हैं वे बेचारे सड़कों पर करते हैं। जो समझदार हैं, चालाक हैं, होशियार हैं, बेईमान हैं, वे साधु के वेश में कर रहे हैं। और इनको तोड़ा भी नहीं जा सकता, वह भी मैं समझता हूं, कि इनके खिलाफ कुछ भी कहो उससे कोई परिणाम नहीं होता। परिणाम उस आदमी पर हो सकता है जो वासना के पीछे न हो, ऐसा आदमी खोजना मुश्किल है।

एक स्त्री मेरे पास आई, उसको बच्चा चाहिए। और उसको मैं समझा रहा हूं कि सब चमत्कार मदारीगिरी है। वह उदास हो गई बिल्कुल, वह बोली कि सब मदारीगिरी है? उसको दुख हो रहा है मेरी बात सुन कर। मुझे खुद ही ऐसा अनुभव होने लगा कि मैं पाप कर रहा हूं जो इसको मैं समझा रहा हूं। क्योंकि हो बच्चा, न हो बच्चा, होने की आशा में तो वह अपना दौड़-धूप कर रही है। तो उससे मैंने कहा, तू मेरी बात की फिकर मत कर, और तू वैसे भी नहीं करेगी, तू जा कोई और खोज, कोई न कोई... पता नहीं कोई कर सके चमत्कार। उसकी आंखों में ज्योति वापस लौट आई। उसने कहा कि आप कहते हैं कि शायद कोई कर सके?

ये हमारे विश्व फुलफिलमेंट हैं, भीतर हमारी इच्छा है कि ऐसा हो। चमत्कार होना चाहिए, ऐसा हम चाहते हैं। इसलिए फिर कोई तैयार होकर बता देता है कि देखो, ये हो रहे हैं! और तुम चाहते थे वह इच्छा पूरी हो गई। और उन चमत्कारियों से कोई भी नहीं कहता कि जब तुम राख ही निकालते हो, तो क्यों राख निकालते हो? कुछ और काम की चीज निकालो, इस मुल्क में कुछ काम आए! क्या तुम ताबीज निकालते हो, जब निकाल ही रहे हो और चमत्कार ही दिखा रहे हो, तो फिर इस मुल्क में कुछ और बहुत चीजों की जरूरत है। और इससे क्या फर्क पड़ता है, जब राख निकल सकती है, ताबीज निकल सकता है, घड़ी निकल सकती है, तो जब एक तरकीब तुम्हारे हाथ ही आ गई तो अब कुछ भी निकल सकता है। अगर एक बूंद पानी को हम भाप बना सकते हैं, तो फिर हम पूरे सागर को भाप बना सकते हैं। नियम की बात है, जब नियम मेरे हाथ में आ गया कि शून्य से राख बन जाती है, तो अब क्या दिक्कत रही! अब कोई दिक्कत नहीं है।

ये चमत्कार दिखाने वाले इस मुल्क में दिखा रहे हैं हजारों साल से चमत्कार। और यह मुल्क रोज बीमारी और गरीबी और दुख में दबता जाता है और मरता जाता है। और ये दिखाते चले जाते हैं। इनकी वजह से, इनके चमत्कार की वजह से गरीबी नहीं मिटती। मेरा मानना है, गरीबी की वजह से इनके चमत्कार चलते हैं। थोड़ी देर को सोच लेना, इतने लोग बैठे हैं, अगर अभी यहां बाहर पता चले कि सत्य साईबाबा मौजूद हैं, तो आपके मन में पहला ख्याल क्या आएगा? और अगर कोई यह कह दे कि वह जो भी आपकी इच्छा है उनसे पूरी हो सकती है। फिर आपकी समझने में उत्सुकता नहीं रह जाएगी। फिर आप चाहेंगे कि कब यहां से छुटकारा हो। क्योंकि समझ-वमझ तो पीछे भी हो सकती है। आपको तत्काल क्या ख्याल आएगा? अगर आपको पता चले कि बाहर साईबाबा खड़े होकर आपकी इच्छा पूरी कर सकते हैं, तो आपको जो पहला ख्याल आएगा वह यह नहीं आएगा कि चमत्कार मदारीगिरी है, पहला ख्याल आपको यह आएगा कि आपकी वासना क्या है? फौरन आपको आपकी वासना उठ जाएगी मन में—कि तो फिर ठीक है, चल कर मैं इतनी मांग कर ही लूं।

आदमी जी रहा है अपनी वासनाओं से। वासनाग्रस्त आदमी, चमत्कार नहीं होता, ऐसा मान नहीं सकता। यह तकलीफ है। वह चाहता है कि चमत्कार होते हों। अगर एक साईबाबा गलत हों तो कोई फिकर नहीं, यह आदमी गलत होगा। लेकिन कहीं कोई न कोई चमत्कार कर रहा होगा, कोई दूसरा ठीक होगा।

मेरे पास लोग आते हैं। वे कहते हैं, ये गलत होंगे, वे गलत होंगे, लेकिन कोई तो ठीक होगा! यह सवाल नहीं है, सब गलत सिद्ध हो जाएं--तो रोज पता चल जाता है कि फलां आदमी गलत सिद्ध हो गया, पर कोई फर्क नहीं पड़ता, चमत्कार जारी रहता है। अ गलत होता है तो ब करता है, ब गलत होता है तो स करता है। कोई न कोई करता है। कोई न कोई देखने वाला तैयार है। चमत्कार नहीं रुकते, चमत्कारी गिरते जाते हैं, चमत्कार नहीं रुकते। क्योंकि कोई बहुत मौलिक वासना की तृप्ति हो रही है। हम हैं दीन और दुखी, बड़ी चाहों से भरे, और कोई आशा नहीं दिखती कि ये चाहें पूरी हम कर पाएंगे। कोई पूरी कर दे आकाश से, तो ही एकमात्र आशा है।

इसलिए दुनिया में चमत्कार होते रहेंगे, जब तक दीनता, दुख, पीड़ा, मूढ़ता सघन हैं। और मैं नहीं देखता कि कभी भी ऐसा मौका आएगा कि आदमी इतना समझदार होगा कि चमत्कार न चलें। बहुत मुश्किल दिखता है, बहुत मुश्किल दिखता है। पांच हजार साल पहले चलते थे, तो हम सोचते थे विज्ञान विकसित नहीं हुआ है। अभी भी चलते हैं, और अब विज्ञान इतना विकसित है। लेकिन कोई फर्क नहीं पड़ता, कोई फर्क नहीं पड़ता। आदमी जब तक नहीं बदलता, कोई फर्क नहीं पड़ेगा। आप कुछ भी खोजबीन करके ले आओ, सब जाहिर कर दो।

इधर मैंने प्रयोग किए, मैं सोचा कि शायद इसका कुछ परिणाम हो! लेकिन फिर मुझे लगा नहीं होगा। मैंने दो मित्रों को राजी किया कि मैं तुम्हें लेकर घूमूं सारे मुल्क में, और जो-जो चमत्कार लोग दिखाते हैं, तुम मंच पर खड़े होकर दिखा दो। और फिर हम लोगों को समझा दें कि यह सब खेल है। मैंने कुछ मित्रों को उनके खेल दिखाए, तो उन्होंने देख कर कहा कि हां, यह होगा खेल! लेकिन सत्य साईबाबा, वह खेल नहीं है। तब मैंने कहा कि फिजूल है, इसमें कोई मतलब नहीं है, इन दो को बेचारों को परेशान करना। वे कहेंगे कि ये हैं मदारी, लेकिन वे थोड़े ही मदारी हैं। क्या किया जा सकता है? इसमें कोई उनकी ये रक्षा कर रहे हैं, ऐसा भी नहीं है। इनको कोई लेना-देना नहीं है। लेकिन इनकी वासना! ये चाहते हैं कि कहीं तो कोई कर रहा हो चमत्कार जो सच्चा है। बस इनकी चाह है।

तो मैं तो सख्त खिलाफ हूं। क्योंकि मेरा मानना है कि इन क्षुद्र बातों में लोगों को उलझाना, उनका समय नष्ट करना है। उनके मनो को लुभाना, व्यर्थ उलझाव में बनाए रखना है। कुछ हल तो नहीं होता।

धार्मिक व्यक्ति का तो कर्तव्य एक है कि कैसे व्यक्ति का दुख शांत हो, इस दिशा में अगर वह कुछ उनको बता सके, कुछ उनको करवा सके, कुछ उनके जीवन को बदलने की कीमिया खोज सके।

बुद्ध ने कहा है कि मैं चिकित्सक हूं, वैद्य हूं। मैं कोई चमत्कार नहीं दिखा सकता, मैं तुम्हें सिर्फ औषधि की प्रक्रिया बता सकता हूं। और तुम बीमार हो। तो अगर तुम्हारी बीमारी को मिटाने की इच्छा हो तो यह औषधि का उपयोग कर सकते हो।

तो मेरा तो औषधि में भरोसा है। लेकिन इस तरह की उत्सुकता उन लोगों में होती है जो कि सच में ही शांति की खोज में हों। अब जो इस खोज में ही नहीं है, उसके लिए तो... ।

फिर मैं मानता हूं कि इतनी बड़ी दुनिया है, उसमें बहुत तरह के लोग हैं। उसमें कोई चमत्कार देखना चाहता है तो उसको देखने का हक है और कोई दिखाना चाहता है उसको दिखाने का हक है। और दोनों मजा ले

रहे हैं तो हम क्यों बीच में बाधा डालें! उनको लेने देना चाहिए। कभी समझ आएगी तो ठीक। इसमें जो देख रहे हैं उनका तो जीवन खराब हो रहा है, जो दिखा रहे हैं उनका और बुरी तरह खराब हो रहा है। क्योंकि देखने वाले तो शायद कभी जग भी जाएं--कि छोड़ो, कहां के खेल में पड़े हुए हैं! वह जो दिखाने वाला है, उसके अहंकार की इतनी तृप्ति होती रहती है, उसे ख्याल भी नहीं होता।

तो मेरे लिए तो साईबाबा जैसे लोग दया के पात्र हैं, दयनीय हैं। उनका जीवन तो बिल्कुल मिट्टी में जा रहा है। धर्म का कोई संबंध चमत्कार से नहीं है।

प्रश्न: भगवान किसी को मनाए जाते हैं।

मेरी दृष्टि में तो भगवान के सिवाय कुछ और है नहीं। कोई जागा हुआ भगवान है, कोई सोया हुआ भगवान है; कोई अच्छे भगवान, कोई बुरे। बाकी भगवान के सिवाय कुछ भी नहीं है।

प्रश्न: बुरे भी होते हैं भगवान?

बिल्कुल! क्योंकि उसके सिवाय कुछ भी नहीं है। अगर बुरे को हम काट दें उससे, तो फिर बुरा होगा कैसे? होना मात्र ही उसका है। तो कोई राम की शक्ल में भगवान, कोई रावण की शक्ल में भगवान। लेकिन रावण को अगर हम कह दें कि उसमें भगवान नहीं है, तो फिर रावण के होने का कोई उपाय नहीं रह जाता। होगा कैसे वह? अस्तित्व ही उसका है।

तो हमें कठिन लगता है कि बुरे भगवान कैसे? चोर भगवान कैसे? बाकी अगर वही है, तो चोर में भी वही है। उसका ही होना अगर सब कुछ है, तो फिर कोई चीज उसके बाहर नहीं। आमतौर से हमारी धारणा ऐसी है कि भगवान कहीं कोई सातवें आकाश में बैठा हुआ कोई व्यक्ति सारी दुनिया को चला रहा है। यह बचकानी है, इसका कोई मूल्य नहीं।

भगवान से मेरा अर्थ है--अस्तित्व, होना मात्र। और जिस दिन भी कोई शुद्ध होने को समझ लेता है--अपनी उपाधियों से हट कर, अपने रोगों से हट कर--जिस दिन शुद्ध होने को थोड़ा समझ लेता है, वही भगवान हो गया। तो यह हमारा मुल्क अकेला मुल्क है जिसने हिम्मतपूर्वक यह कहा है कि सभी में भगवान है। और भगवान को अलग न रख कर हमने प्रत्येक के भीतर केंद्र पर रख दिया। वह होने का सहज गुण है। न जानो, सोए रहो, मत पहचानो--यह हो सकता है। मगर वह भी तुम्हारी मर्जी। कोई भगवान अपने को नहीं पहचानना चाहता तो क्या किया जा सकता है! वह नहीं पहचाने। लेकिन जिस दिन भी पहचानेगा, उस दिन ख्याल में आ जाएगा।

तो भगवान तुमसे कोई दूर कोई अलग वस्तु है, ऐसा नहीं है--मेरी धारणा। मेरी धारणा यह है कि तुम्हारा होना ही भगवत्ता है। और जैसे मछली को पता नहीं चलता कि सागर कहां? पता भी कैसे चले, क्योंकि उसी में पैदा होती है, उसी में जीती है, उसी में मरती है। मछली को तो पता ही तब चलता है सागर का जब कोई उसे खींच कर किनारे पर निकाल लेता है।

हमारी मुसीबत यह है कि भगवान को छोड़ कर कोई किनारा भी नहीं जहां खींच कर हमको निकाला जा सके। इसलिए हमको कोई पता नहीं चलता उसके होने का कि वह क्या है? कहां है? मछली तट पर आकर

तड़फती है, तब उसको पता चलता है कि कुछ खो गया जो सदा था, लेकिन जब था तब पता भी नहीं चलता था। आदमी को भगवान के बाहर नहीं खींचा जा सकता, यही तकलीफ है। नहीं तो हमको पता चल जाए कि भगवान क्या है!

लोग कहते हैं कि भगवान मिलता नहीं। और मैं कहता हूं, चूंकि तुमने कभी खोया नहीं, यही तकलीफ है। एक दफे भी उसे खो देते तो तुम्हें मिल जाता। मिलने के लिए खोना बिल्कुल जरूरी शर्त है। और चूंकि हम उसी में जी रहे हैं, हम वही हैं, इसलिए हमें पता नहीं चलता।

फिर मेरे मन में, चूंकि मैं देखता हूं कि बुरा भी वही है, बुराई के प्रति भी मेरे मन में कुछ बुरा भाव नहीं रह जाता। यह मैं, इसको मैं एक आध्यात्मिक रूपांतरण की कीमिया मानता हूं। अगर यह मेरा ख्याल हो कि सभी वही है, तो जिसको हम बुरा कहते हैं वह भी वही है। तो फिर बुराई के प्रति भी बुराई का कोई भाव नहीं रह जाता। ठीक है, वह भी ठीक है। शायद वह भी अनिवार्य हिस्सा है। शायद उसके बिना भी जगत नहीं हो सकता। जैसे अंधेरे के बिना प्रकाश नहीं हो सकेगा और मृत्यु के बिना जीवन नहीं हो सकेगा, शायद इसी तरह रावण के बिना राम भी नहीं हो सकते। शायद परमात्मा के होने के ढंग में ये दोनों बातें साथ-साथ सम्मिलित हैं कि जब भी वह राम होगा तब रावण भी होगा, नहीं तो नहीं हो सकता।

तो यह द्वंद्व जो हमें इतना विपरीत दिखाई पड़ता है, कहीं भीतर जुड़ा हुआ है। थोड़ा रावण को अलग कर लें राम की कथा से, और राम के प्राण निकल जाते हैं। रावण के बिना क्या बल है कथा में? कथा में बचेगा क्या? एक रावण को हटा लें तो पूरी रामायण व्यर्थ हो जाती है।

तो जब मैं ऐसा देखता हूं कि बुरा और भला एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, तो बुरा भी कुछ बुरा नहीं रह जाता। इसलिए मेरी कोई चेष्टा ऐसी नहीं है कि बुरे आदमी को अच्छा बनाओ। मेरी चेष्टा ऐसी है कि बुरा आदमी ठीक से बुरा हो जाए और अच्छा आदमी ठीक से अच्छा हो जाए।

मेरा आप फर्क समझ रहे हैं न?

क्योंकि बुरा आदमी अच्छा हो जाए, ऐसी मेरी कोई कोशिश नहीं, कि रावण को राम बनाओ। कुछ मतलब हल न होगा, सब खराब हो जाएगा, सब खराब हो जाएगा। और कुछ न कहो कि रावण कोई दिन राम बन जाए, तो राम को बेचारों को तत्काल रावण बनना पड़े, क्योंकि इसके सिवाय कोई उपाय नहीं है, कोई उपाय नहीं है। रावण अच्छा रावण हो--शानदार--पूरी तरह प्रकट हो; और राम पूरी तरह प्रकट हों अपनी प्रतिभा में। तो ये खेल का पूरा रूप आ जाए।

तो मैं नहीं कहता किसी को कि तुम ऐसे हो जाओ। मैं कहता हूं, तुम जो हो वही तुम पूरी तरह हो जाओ। कोई ढांचा नहीं देता कि ऐसे बनो! क्योंकि मैं कौन हूं ढांचा देने वाला? तुम जो बन सकते हो वही बनो। उसमें पूरी तरह संलग्न हो जाओ। और कैसे पूरी तरह संलग्न हो सकते हो, वह मैं जरूर कहता हूं। और जिस दिन तुम जो हो वही बन जाओगे, उस दिन तुम्हें परमात्मा की प्रतीति हो जाएगी। क्योंकि जिस दिन तुम पूरे खिलोगे अपने व्यक्तित्व में--वही, वही अनुभव है उसका। व्यक्ति का पूरा खिल जाना ही, उसके भीतर जो छिपा है उसका पूरा पंखुडियों तक फैल जाना ही--अनुभव है।

तो मेरे लिए भगवान तो सभी हैं। और अगर इसका ख्याल भी पैदा हो जाए कि मैं भी भगवान हूं, तो तुम्हारी जिंदगी बदलनी शुरू हो जाए। क्षुद्र से जोड़ना ही क्यों नाता अपना? नाता ही जोड़ना हो तो विराट से ही जोड़ लेना चाहिए।

प्रश्न: हमको चमत्कार के बाबत में थोड़ा और समझाइए। आपने जो बताया बराबर मतलब का है। लेकिन को-इंसिडेंस से कभी मेरा खुला रहना वह चमत्कार के टाइम में जब परिणाम आ जाता है, जो घटता है तो परिणाम आता है, तो को-इंसिडेंस है या ऑटो-सजेशन है कि सच्ची बात क्या है?

बहुत से कारण हो सकते हैं, लेकिन चमत्कार नहीं है। चमत्कारिक भी मालूम हो, चमत्कार नहीं है। आदमी के मन के बहुत से नियम हैं, जिनका हमें होश नहीं है। और उन नियमों के कारण बहुत सी घटनाएं घटती हैं।

एक युवक मेरे पास आता है। पहली दफा जब आया तो किसी डाक्टर ने भेजा था। उसके पेट में दर्द था, वह डाक्टर इलाज कर-कर के परेशान हो गया था। तो उसने तो सिर्फ अपनी बला टाली। क्योंकि उस डाक्टर ने मुझे कहा कि यह तो बड़ी मुश्किल बात हो गई, मैं तो इसको इसलिए हटाया कि यह रोज मेरे दवाखाने में बैठ जाता आकर। और इसकी वजह से दूसरे मरीजों पर बुरा असर पड़ता। क्योंकि यह कहता कि साल भर हो गया, अभी तक ठीक नहीं हुआ! तो मैंने इसके हाथ जोड़े और कहा कि तू उनके पास जा, अब उनसे ही ठीक होगा! हमसे ठीक नहीं होने वाला। सिर्फ बला टालने के लिए आपके पास भेजा था और यह ठीक हो गया!

वह मेरे पास आया और कहा कि मुझे अपने हाथ का छुआ हुआ पानी दे दें, वह डाक्टर ने कहा है। मैंने कहा, बात क्या है? उसने कहा कि बात पूछने की--साल भर से मुझे पेट की तकलीफ है।

और जिसको डाक्टर ठीक न कर पाया हो, वह फिर चमत्कार से ही ठीक होता है। क्योंकि डाक्टर ठीक नहीं कर पाया, उसका मतलब यह है कि शरीर में कोई रोग नहीं है। नहीं तो डाक्टर ही ठीक कर लेता, ऐसी कोई बात नहीं थी। रोग सिर्फ मन में है, उसको सिर्फ ख्याल है कि पेट में दर्द है।

मैं उसको इनकार किया, उसको कहा कि यह मैं करूंगा नहीं, क्योंकि कल और लोग आ जाएं। तब उसने मेरे पैर पकड़ लिए, उसने कहा कि आप क्या कह रहे हैं, मैं किसी को बताऊंगा ही नहीं! मैंने कहा, यह बात छिपती नहीं, तू साल भर से बीमार है और अगर ठीक हो गया, तो तू तो ठीक हुआ, हम फंस गए, क्योंकि और लोग आ जाएंगे। बारह बजे रात तक मैं उसे रोके रहा। जब वह बिल्कुल छाती पीट कर रोने लगा, मेरी मां मौजूद थी वहां, उसने मुझे कहा कि यह बेचारा सिर्फ पानी ही मांगता है, तीन घंटे से मैं सुन रही हूं तुम्हारी बातचीत, इसको पानी दो--हो ठीक, न हो ठीक--झंझट मिटाओ और सो जाओ।

पर तीन घंटे उसे रोकना जरूरी था। क्योंकि जितना मैंने उसे रोका, उतना उसका पक्का होता गया कि पानी में कुछ है! नहीं तो फिर रोकने की बात भी क्या थी? मजबूरी में मैंने उसे दिया और मैंने कहा कि तू कसम खा कि किसी को बताएगा नहीं अपने घर में भी। जब उसने कसम खा ली, तब मैंने उसे पानी दिया। पानी पीते से ही वह बोला कि अरे, मेरा दर्द तो चला गया! और दर्द उसका चला गया।

न तो कोई संयोग है, न कोई चमत्कार है। उसका एक वहम था। और वहम के निकलने के लिए एक ही उपाय है कि किसी पर भरोसा आ जाए। और कोई उपाय नहीं है। वहम के निकलने का एक ही उपाय है कि उससे बड़ा वहम पैदा हो जाए। उसका वहम था कि पेट में दर्द है, अब उसका वहम है कि मैं चमत्कारी हूं। यह बड़ा वहम है। और जो झूठा पेट में दर्द पैदा कर ले, वह झूठा चमत्कारी न पैदा कर ले इसमें कठिनाई क्या है? है उसका ही खेल, मेरा कोई लेना-देना नहीं है उसमें। कल तक वह पेट में दर्द पैदा कर रहा था, डाक्टर को साल भर तक जिसने हराया, वह कोई छोटा-मोटा आदमी नहीं है--वहम पैदा कर सकता है। और दर्द जैसा वहम पैदा कर लिया, जिसमें दुख ही पाया। तो यह तो बड़ा सुखद था मामला। उसने, घूंट अंदर नहीं गया कि उसने कहा

कि गजब, यह तो चमत्कार हो गया! और उसने कहा कि वह कसम-वसम मैं नहीं मानूंगा, क्योंकि मेरी मां की तबीयत खराब है।

और आप जान कर हैरान होंगे कि वह एक बोतल रखने लगा, जिसको मुझसे छुआ कर ले जाता था, और मरीजों को ठीक करने लगा। क्योंकि उसको देख कर मरीज... उसका पूरा मोहल्ला जानता था कि वह तो क्रानिक मरीज है, वह कोई ठीक होने वाला प्राणी नहीं। वह ठीक हो गया, तो उससे लोग मांगने लगे कि किस तरकीब से? और अनेकों को वह ठीक करने लगा।

अब मैं उसको समझाऊं भी तो समझाने का कोई उपाय नहीं, क्योंकि वह ठीक हो गया है। और ठीक होने का एक नियम है, सौ में से नब्बे बीमारियां मानसिक हैं, इसलिए नब्बे बीमारियां तो चमत्कार से ठीक हो ही सकती हैं। वे जो दस बीमारियां हैं जो मानसिक नहीं हैं, उनका भी चमत्कार से असर हो सकता है, आपको भुलाई जा सकती हैं। जैसे कि झूठी बीमारी पैदा हो सकती है, वैसे ही सच्ची बीमारी भूल सकती है।

हिप्नोसिस में दो तरह के प्रयोग हैं। अभी किसी को सम्मोहित किया जाए, और एक खाली कुर्सी रख दी जाए। जब वह सम्मोहित हो तब उसको कहा जाए कि खाली कुर्सी पर उसका कोई परिचित व्यक्ति आकर बैठा गया। फिर उससे कहो, आंखें खोलो! वहां कुर्सी खाली है, वह देखेगा बराबर कि फलां आदमी बैठा हुआ है, जो नहीं है वह दिखाई पड़ रहा है। इससे उलटा भी हो जाता है, जो कुर्सी पर बैठा हुआ आदमी है, उसको कहो कि कुर्सी खाली है, यहां कोई नहीं है। फिर उससे आंख खोलने को कहो, उसको दिखाई नहीं पड़ेगा।

हमारा मन जो देखना चाहे, वह न हो तो भी दिखाई पड़ सकता है। और हमारा मन जो देखना न चाहे, तो जो हो वह भी नहीं दिखाई पड़ेगा। अब इसके लिए जरूरी है कि एक बहुत गहरी आस्था का भाव पैदा हो जाए। चमत्कारी व्यक्ति उतना ही काम कर रहा है कि वह उतना भरोसा दिलवा रहा है कि ठीक।

अब इसमें कठिनाइयां ये हैं कि अगर चमत्कारी व्यक्ति... जैसे मैंने यह बात आपसे कह दी, अब आपके पेट में दर्द हो तो मैं कुछ नहीं कर सकता। यह बेकाम है, मेरा चमत्कार काम नहीं करेगा। आपके पेट में दर्द हो तो मैं तभी आपको ठीक कर सकता हूं, जब मेरे आस-पास मैं हवा बना कर रखूं पूरी की पूरी कि मैं चमत्कारी हूं। इसमें जरा भी एक्सप्लेनेशन खतरनाक है। इसमें जरा सी व्याख्या साफ हो गई आपकी तो फिर आपको फायदा मुझसे नहीं हो सकता। आपको फायदा इसी आधार पर हो सकता है कि मैं चमत्कारी हूं, मैं फायदा करता हूं। अगर मैं आपको कहूं कि आपसे आपको ही फायदा हो गया है, मैं सिर्फ बहाना था। तो हो सकता है दर्द चला गया हो वह भी वापस लौट आए। बिल्कुल लौट सकता है! क्योंकि उसका मतलब है कि चमत्कार... आपका अपने पर भरोसा है ही नहीं, यही तो तकलीफ है, इसलिए कोई और चाहिए। आत्मविश्वास की कमी आपकी बीमारियों का आधार है। तो कोई आपको चाहिए जो आत्मविश्वास दिला दे, वह किसी भी तरह से दिला दे।

तो जितना प्रतिष्ठित हो वह विश्वास उतना फायदे का है। जैसे अगर आपको मुझे सच में ठीक करना है तो मेरे आस-पास दस-पच्चीस लोग चाहिए, जो आपके आते से ही बताने लगें--किसी की टांग ठीक हो गई, किसी का कान ठीक हो गया। और ये अपने आप इकट्ठे हो जाते हैं, इनको इकट्ठा करने की कोई जरूरत नहीं पड़ती। क्योंकि अगर मेरे पास दस आदमी आएँ और उनमें से दो ठीक हो जाएँ, तो जो आठ ठीक नहीं होंगे वे किसी दूसरे को तलाशेंगे, वे यहां काहे के लिए आएंगे! वे जो दो ठीक हो गए, वे यहां आएंगे। मेरे आस-पास इस तरह के लोगों की भीड़ इकट्ठी हो जाएगी जो मुझसे ठीक हुए। और जब एक नया आदमी आता है बीमारी लिए हुए, तो बीमारी तो वह छोड़ना ही चाहता है, यहां देखता है--इसका यह छूट गया, उसका वह छूट गया। मेरे आने के



पहले ही चमत्कार काफी हो चुका होता है। उसके मेरे पास आने की बात है, वह ऊंट पर आखिरी तिनका रखना है, वह ठीक हो जाएगा।

यह जो ठीक होना है, यह सीधे मन के नियम से हो रहा है। और चूंकि आप अपनी बीमारियां पैदा कर रहे हैं, इसलिए चमत्कार दिखाए जा रहे हैं। नहीं तो कहीं कोई चमत्कार की जरूरत नहीं है।

पर ये चमत्कार खतरनाक हैं। खतरनाक इसलिए हैं कि आपकी मूल जो बीमारी की आधारशिला थी वह नहीं बदलती, बीमारी बदल जाती है। इस आदमी का पेट ठीक हो गया, लेकिन यह आदमी तो वही का वही है। कल यह सिरदर्द पैदा कर लेगा, फिर उसको किसी चमत्कार की जरूरत है। परसों यह पैर में तकलीफ पैदा कर लेगा। इसका मन तो वही का वही है, बीमारी एक तरफ से हटा दी, अब यह दूसरी तरफ से पकड़ लेगा। इस आदमी को कोई लाभ नहीं हो रहा है। क्योंकि लाभ तो इसको तभी हो सकता है जब यह समझ ले कि बीमारी मैं पैदा कर रहा हूं, और होशपूर्वक उस बीमारी को छोड़ दे, तो फिर यह आदमी दुबारा बीमारी पैदा नहीं करेगा।

तो अब मेरे सामने दो विकल्प रहे सदा कि क्या मैं आपकी एक बीमारी में सहायता करके छोड़ दूं, दूसरी बीमारी आप पैदा करें।

मेरे लिए सरल काम वही था कि आपकी एक बीमारी ठीक कर दी, आपको लगा कि बिल्कुल ठीक हो गया, बात खतम हुई। उसमें समझाने-बुझाने की कोई भी जरूरत नहीं है। समझाने-बुझाने का काम ही नहीं है उसमें बिल्कुल। उसमें तो चमत्कारी पुरुष जितना चुप रहे उतना अच्छा है। क्योंकि आपमें बुद्धि डालना ठीक नहीं, अबुद्धि से ही आपको फायदा हो रहा है।

दूसरा यह है कि मैं आपको समझाऊं कि आपकी सारी बीमारी, सारे दुख की जड़ क्या है! मगर तब मुझे चमत्कारी होने का कोई उपाय नहीं है। तब तो मैं आपके साथ संघर्ष करूं, आपकी बुद्धि को निखारूं, तोड़ूं, मिटाऊं, नया बनाऊं कि किसी दिन ऐसा क्षण आ जाए कि न तो आप झूठी बीमारी पकड़ें, न झूठे चमत्कारों की जरूरत रहे। आप मुक्त हो जाएं भीतर अपनी बीमारी से--अपने बल से--उसमें आपकी सहायता करूं।

सच्चा शिक्षक मैं उसको कहता हूं, जो आपको सहायता करे स्वतंत्र होने के लिए कि एक दिन आप मुक्त हो जाएं और स्वतंत्र हो जाएं, अपने पैर पर खड़े हो जाएं। और झूठा शिक्षक मैं उसको कहता हूं, जो आपकी बीमारी भी ठीक करे, लेकिन उसी कारण से करे जिस कारण से बीमारी थी।

मैं एक कहानी कहता रहा हूं। एक घर में एक मेहमान आकर रहा। तो मेहमान जवान था, और बिगड़ न जाए, तो घर के लोगों ने उसको डरवा रखा था कि बाजार न जाए, रात सिनेमा न जाए। बीच में एक मरघट पड़ता था, तो कह रखा था कि उस मरघट से गुजरना बहुत खतरनाक है। भूत-प्रेत! तो उसे भूत-प्रेत का डर पैदा हो गया। तो वह रात तो नहीं जाता था बस्ती की तरफ, लेकिन धीरे-धीरे डर इतना बढ़ा कि दिन में भी वह अकेला न जाए। तो घर के लोगों ने कहा, यह तो मुसीबत हो गई। वे भूत-प्रेत जिनसे रात में डरवाया था, वे कोई कंपार्टमेंट तो मानते नहीं, वे दिन में भी डरवाएंगे। डर ही तो कारण था, डर पकड़ गया, अब वह दिन में भी कहे कि कोई साथ चलो तो वह बस्ती में जाएगा अंदर। तो फिर उन्होंने कहा, कोई उपाय करना पड़े।

तो एक फकीर के पास ले गए। तो उस फकीर ने कहा कि इसमें कोई दिक्कत की बात नहीं। यह ताबीज मैं बांधे देता हूं, इस ताबीज की इतनी ताकत है कि कोई भूत-प्रेत पास नहीं आ सकता। तू बिल्कुल ताबीज पहन कर मरघट से निकल जा।

ताबीज पहन कर वह आदमी मरघट से निकले, वहां कोई भूत तो था नहीं, कोई आया भी नहीं, लेकिन वह समझा कि ताबीज! अब वह ताबीज के बिना एक मिनट न रहे, क्योंकि ताबीज अगर रात छोड़ कर भी रख दे तो उसे घबड़ाहट लगे कि कहीं भूत-प्रेत पास न आ जाएं। अब वह ताबीज की मुसीबत हो गई! मगर बीमारी वही की वही है। भूत-प्रेत से डरता था, अब ताबीज से डरने लगा--कि कहीं ताबीज खो जाए, कोई ताबीज चुरा ले, या ताबीज गिर जाए, या ताबीज के साथ कोई अशिष्टता हो जाए, या ताबीज अपवित्र हो जाए, या कुछ हो जाए। अब वह चौबीस घंटे ताबीज से घिर गया, बीमार वहीं का वहीं है--कल भूत सता रहे थे, अब ताबीज सता रहा है। अब उसको ताबीज से छुटकारा करवाना। हम छुटकारा करवा सकते हैं दूसरी चीज पकड़ा कर, मूल आधार वही रहे।

मेरी प्रक्रिया सारी इतनी है कि आपको कोई ताबीज न देना पड़े। आपकी बीमारी है, तो चाहे थोड़ी देर लगे, मुश्किल पड़े--कोई फिकर नहीं, उससे भी प्रौढ़ता आएगी--लेकिन बीमारी जाए, नई बीमारी बिना पकड़े। इसको ही मैं कहूंगा कि असली चमत्कार है, बाकी सब धोखाधड़ी है। और मन इतनी कुशलता से खड़ा करता है कि हमें ख्याल नहीं है।

खोज कहती है कि सौ में से केवल तीन सांप में जहर होता है, सत्तानवे सांपों में जहर होता ही नहीं। लेकिन आदमी तीन परसेंट से ज्यादा मरते हैं। और कोई भी सांप काटे और मरने का डर पैदा हो जाता है। और जहर है नहीं उसमें, आप मरते कैसे हैं? सांप में जहर है ही नहीं, और आदमी को काटा और आदमी मर गया। आदमी सांप से कम मरता है, सांप ने काटा इससे मरता है। असली जहर सांप में नहीं है, आदमी के मन में है कि सांप ने काट खाया! फिर चाहे चूहे ने ही काटा हो, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, आदमी मर जाएगा। इसलिए सांप झाड़ा जा सकता है, क्योंकि कोई जहर तो होता नहीं। सत्तानवे मौके पर सांप का झाड़ने वाला सफल होगा। क्योंकि जहर तो होता ही नहीं, आदमी का कोई वास्तविक कारण नहीं है मरने का, सिर्फ यह ख्याल।

तो मेरे एक मित्र जो सांप झाड़ने का काम करते हैं, उन्होंने सांप पाल रखे हैं। यह जरूरी है। जब उनके लड़के को सांप ने काट खाया, तो वे भागे मेरे पास आए कि आप कुछ करो। मैंने कहा कि तुम तो न मालूम कितनों के झाड़ चुके। उन्होंने कहा, वह काम इस पर नहीं करेगा। लड़का जानता है! वह जो तरकीब है वह लड़का जानता है। यह ज्ञान के साथ यह खराबी है। उस लड़के से भी मैंने पूछा कि तू क्यों घबड़ा रहा है? तेरे बाप को... । उसने कहा, उनका मुझे पता है। मुझ पर न चलेगा उनका काम! क्योंकि मैं खुद ही उनका सांप छोड़ता हूँ।

वह जब सांप कोई काटता है, तो सांप उन्होंने पाल रखे हैं, तो वे भारी मंत्र पढ़ेंगे और मुंह से फसूकर गिरेगा, फिर वे चिल्लाएंगे-चीखेंगे, फिर वे सांप को आवाज देंगे। फिर जिस सांप ने काटा है वह सांप आएगा, बाहर दरवाजे से चलता हुआ अंदर आएगा। जब वह मरीज देखता है काटा हुआ कि सांप आ गया, तो वह भी चमत्कृत हो जाता है--कि जिस सांप ने काटा था! कभी-कभी छह-छह घंटे लग जाते, क्योंकि सांप बहुत दूर है, वह आए तब! फिर सांप आता है, वह सांप आकर बिल्कुल कंपने लगता है और सिर पटकने लगता है झाड़ने वाले के सामने। तो मरीज आधा तो ठीक हो ही गया, उसने कहा, गजब का चमत्कार है! फिर वे सांप को कहते हैं कि वापस जहां उसको काटा है, उसको वापस उसका खून पीओ। तो वे सांप मुंह लगा कर वहां से--वे सब ट्रेंड सांप हैं--दो-चार बूंद खून की टपक आती हैं! वे कहते हैं, बस। जहर उसने वापस ले लिया।

उनके लड़के को काट लिया। अब वह लड़का कहे कि हम खुद ही छोड़ते हैं, इसलिए बड़ी मुसीबत है। और बाप भी कहे कि मेरा काम नहीं चलेगा इसमें, आप कुछ करो।

तो इस सारे चमत्कार की दुनिया में आपकी वे बीमारियां दूर हो रही हैं जो कभी थी ही नहीं। इसका यह मतलब नहीं है कि आप तकलीफ नहीं पा रहे थे। आप तकलीफ पा रहे थे, आप मर भी जाते, यह भी हो सकता है। और लाभ आपको पहुंचाया जा रहा है, इसलिए लाभ पहुंचाने वाले को दोष देने का भी कोई कारण नहीं है। जब तक आप हो, तब तक किसी को झूठा सांप झाड़ना पड़ेगा। यह आपकी वजह से उपद्रव है।

आप जान कर हैरान होंगे कि ऐसी घटनाएं घटी हैं... बहुत प्रसिद्ध घटना है सूफी जुन्नैद के बाबत; वह निरंतर कहा करता था कि उसने एक आदमी को मरते देखा। वह एक कॉफी हाउस में बैठा हुआ था और गपशप कर रहा था, कुछ लोग और बैठे हुए थे। और एक आदमी आया। उस कॉफी हाउस के मालिक ने कहा, अरे, तुम अभी जिंदा हो?

उस आदमी ने कहा, क्या बात करते हो! तुमको किसी ने कहा कि मैं मर गया?

उसने कहा, नहीं, किसी ने कहा नहीं; हमने सोचा हुआ था; भूल हुई। साल भर पहले जब तुम यहां रुके थे, तो तुम्हारे साथ तीन आदमी और रुके थे उस रात यहां, चारों ने रात जो खाना खाया था यहां वह विषाक्त हो गया था। तुम तो आधी रात उठ कर चले गए, तुम्हें कहीं जाना था यात्रा पर, बाकी तीन मर गए। तो हम यही सोचते थे कि तुम मर गए होओगे।

वह साल भर बाद वापस लौटा था। यह सुनते ही वह बेहोश होकर गिर पड़ा। वह जो आदमी था, साल भर पहले... ।

जुन्नैद ने लिखा है, जब मैंने उसको बेहोश होकर गिरते देखा, तो मुझे दुनिया के सब चमत्कार समझ में आ गए। अब यह जो आदमी है यह गिर पड़ा--तीन मर गए, विषाक्त भोजन--साल भर का फासला ही मिट गया, उसको ख्याल ही न रहा कि यह साल भर पहले की बात है। उसको होश में लाने के लिए पड़ोस से झाड़ने-फूंकने वाले बुलाने पड़े, बामुश्किल वह होश में आया।

आदमी का मन है और उसके नियम हैं, उनसे सारा खेल है।